ननु पारलौकिकसुखाभावे बहुवित्तव्ययशरीरायाससाध्येऽग्निहोत्रादौ विद्यावृद्धाः कथं प्रवर्तिष्यन्ते ? इति चेत्, तदपि न प्रमाणकोटिं प्रवेष्टुमीष्टे । अनृत-व्याघात-पुनरुक्तदोषैः दूषिततया वैदिकम्मन्यैरेव धूर्तबकैः परस्परं—कर्मकाण्डप्रामाण्यवादिभिः ज्ञानकाण्डस्य, ज्ञानकाण्डप्रामाण्यवादिभिः कर्मकाण्डस्य च—प्रतिक्षिप्ततत्वेन, त्रय्या धूर्तप्रलापमात्रत्वेन, अग्निहोत्रादेः जीविकामात्रप्रयोजनत्वात् । तथा च आभाणकः—

३. अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम् ।
बुद्धिपौरुषहीनानां जीविकेति बृहस्पतिः ।। इति ।

यदि [कोई पूछे कि—] पारलौकिक-सुख (का अस्तित्व) न हो तो विद्वान लोग अग्निहोत्रादि (यज्ञों) में क्यों प्रवृत्त होते हैं जब कि उन यज्ञों में अपार धन का व्यय तथा शारीरिक श्रम भी लगता है ?—तो, यह (तर्क) भी प्रामाणिक नहीं माना जा सकता है क्योंकि अग्निहोत्रादि कर्मों का प्रयोजन केवल जीविका-प्राप्ति ही है; तीनों (वेद) केवल धूर्तों (ठगनेवालों) के प्रलाप हैं, क्योंकि अपने को **वेदज्ञ** समझनेवाले धूर्त 'बगुला-भगतों ने' आपस में ही [वेद को] अनृत (झूठा), व्याघात (आपस में विरोध) और पुनरुक्त (दुहराना) दोषों से दूषित किया है, [उदाहरण के लिए]—